

[2025] 5 एस. सी. आर 217:2025 आई. एन. एस. सी. 491

सतीश चंदर शर्मा एवं अन्य

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य एवं अन्य

(रिट याचिका (सिविल) संख्या 179/2018)

16 अप्रैल 2025

[सूर्यकान्त, दीपांकर दत्ता और उज्ज्वल भुयान,* जेजे.]

विचारणीय मुद्दा

यह मुद्दा उठा कि क्या हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम राजेश चंदर सूद मामले में 02.12.2004 की कट-ऑफ तिथि को बरकरार रखने वाला निर्णय प्रति-अधिनियम है; क्या उपरोक्त निर्णय याचिकाकर्ताओं पर बाध्यकारी है; क्या संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत एक रिट याचिका सर्वोच्च न्यायालय के किसी निर्णय को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से चुनौती देने के लिए विचारणीय है।

मुख्य टिप्पणियाँ †

भारत का संविधान- अनुच्छेद 32- उच्चतम न्यायालय का निर्णय/आदेश अनुच्छेद 136 के तहत पारित किया गया, जो अनुच्छेद 32 के तहत न्यायिक समीक्षा के लिए उत्तरदायी नहीं है- एक मामले में, उच्च न्यायालय ने याचिकाकर्ताओं के एक अन्य समूह द्वारा दायर रिट याचिकाओं को अनुमति दी, जिसमें राज्य को हिमाचल प्रदेश राज्य वन विकास निगम लिमिटेड (निगम) के सेवानिवृत्त कर्मचारियों को हिमाचल प्रदेश कॉर्पोरेट क्षेत्र के कर्मचारियों (पेंशन, पारिवारिक पेंशन, पेंशन और ग्रेच्युटी का कम्यूटेशन) योजना, 1999 के संदर्भ में पेंशन प्रदान करने का निर्देश दिया गया था- उक्त निर्णय को इस न्यायालय की दो-न्यायाधीशों की पीठ द्वारा हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम राजेश चंदर सूद केस में उलट दिया गया था। याचिकाकर्ताओं, निगम के सेवानिवृत्त अधिकारियों द्वारा दायर अनुच्छेद 32 के तहत वर्तमान याचिका, राजेश चंदर सूद के फैसले को चुनौती देते हुए, 1999 की योजना के संदर्भ में उन्हें पेंशन लाभ से इनकार करने से व्यथित, अधिसूचना दिनांक 02.12.2004 द्वारा बंद कर दी गई, जिसमें उन लोगों के लिए एक अपवाद बनाया गया था जिन्होंने योजना का विकल्प चुना था और 02.12.2004 से पहले सेवानिवृत्त हुए थे:

अभिनिर्धारित किया गया: राजेश चंद्र सूद मामले में, इस न्यायालय ने माना कि राज्य

*लेखक

सरकार द्वारा एक कट-ऑफ तिथि निर्धारित करना उचित था, जिसके अनुसार 1999 योजना द्वारा शासित कुछ कर्मचारी (जो 02.12.2004 से पहले सेवानिवृत्त हो गए थे, वे 1999 योजना के तहत पेंशन पाने के हकदार थे, जबकि जो लोग 02.12.2004 को निरसन अधिसूचना जारी होने के समय तक सेवानिवृत्त नहीं हुए थे, उन्हें इस तरह के लाभ से वंचित कर दिया गया था) - यह अभिनिर्धारित किया गया कि राज्य सरकार के पास 1999 की योजना को निरस्त करने का अधिकार है और ऐसा करके, उसने कर्मचारियों के पेंशन प्राप्त करने के अधिकार को कम नहीं किया है, बल्कि वे पूर्ववर्ती पेंशन योजना के तहत पेंशन प्राप्त करना जारी रखेंगे, हालाँकि, उन्हें 1999 की योजना के तहत अतिरिक्त लाभ नहीं मिलेंगे। - इस न्यायालय ने सिविल अपील को स्वीकार करते हुए और 02.12.2004 की कट-ऑफ तिथि को बरकरार रखते हुए विस्तृत कारण बताए थे। - राजेश चंद्र सूद ने किसी भी बाध्यकारी मिसाल की अनदेखी नहीं की और यह प्रासंगिक कानून के अनुसार नहीं है - जब इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय के फैसले को रद्द कर दिया था, तो न केवल उन याचिकाकर्ताओं बल्कि समान स्थिति वाले कर्मचारियों (वर्तमान याचिकाकर्ताओं की तरह) के दावे को भी नकार दिया गया था - इस प्रकार, राजेश चंद्र सूद याचिकाकर्ताओं पर बाध्यकारी है - इसके अलावा, भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत न्यायिक समीक्षा के अधीन नहीं है - इस प्रकार, धारा 32 के तहत राजेश चंद्र सूद मामले में इस न्यायालय के निर्णय को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कोई चुनौती नहीं दी जा सकती है - वर्तमान रिट याचिका गलत है। [अनुच्छेद 21.5, 22, 23, 28, 32]

न्यायिक प्रशासन- निर्णयन प्रक्रिया- अंतिमता का सिद्धांत- अंतिम निर्णय, न्यायाधीशिक प्रणाली का मूल पहलू- इस पर जोर दिया गया:

अभिनिर्धारित किया गया: जो मुकदमे समाप्त हो चुके हैं या अंतिम चरण पर पहुँच चुके हैं उन्हें दोबारा नहीं खोला जा सकता - कोई वादी जो सर्वोच्च न्यायालय द्वारा विशेष अनुमति याचिका या उससे उत्पन्न किसी दीवानी अपील में दिए गए किसी निर्णय से व्यथित है, वह समीक्षा अधिकार क्षेत्र का आह्वान करके और उसके बाद उपचारात्मक याचिका के माध्यम से उसकी समीक्षा की मांग कर सकता है - लेकिन ऐसे निर्णय को

भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत रिट कार्यवाही में चुनौती नहीं दी जा सकती - यदि इसकी अनुमति दी जाती है, तो कोई अंतिम चरण नहीं होगा और न्यायिक प्रशासन में अराजकता पैदा करने वाले मुकदमेबाजी का कोई अंत नहीं होगा - भारत का संविधान-अनुच्छेद 32 [पैरा 30]

केस कानून का हवाला दिया गया

हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम राजेश चंदर सूद [2016] 6 एससीआर 851:(2016) 10 एस. सी. सी. 77- प्रासंगिक कानून के अनुसार आयोजित नहीं।

नरेश श्रीधर मिराजकर बनाम महाराष्ट्र राज्य [1966] 3 एससीआर 744:ए. आई. आर. 1967 एस. सी. 1- अपनाया गया।

उप-निरीक्षक साधन कुमार गोस्वामी बनाम भारत संघ [1996] सप.7 एससीआर 814:(1997) 2 एस. सी. सी. 225; भारतीय परिषद पर्यावरण- कानूनी कार्रवाई बनाम भारत संघ [2011] 9 एस. सी. आर. 146:(2011) 8 एस. सी. सी. 161; खोडे डिस्टिलरीज लिमिटेड बनाम महापंजीयक, भारतीय सर्वोच्च न्यायालय [1995] सप.6 एससीआर 190:(1996) 3 एस. सी. सी. 114-पर निर्भर।

आर. आर. वर्मा बनाम भारत संघ (1980) 3 एस. सी. आर. 478:(1980) 3 एस. सी. सी. 402; बाल्को कर्मचारी संघ बनाम भारत संघ [2001] सप.15 एससीआर 511:(2002) 2 एससीसी 333; डी. एस. नाकारा बनाम भारत संघ [1983] 2 एस. सी. आर. 165:(1983) 1 एससीसी 305; रूपा अशोक हुर्ना बनाम अशोक हुर्ना [2002] 2 एससीआर 1006:(2002) 4 एससीसी 388; ए. आर. अंतुले बनाम आर. एस. नायक [1988] पूरक.1 एस. सी. आर 1:(1988) 2 एस. सी. सी. 602; ओमप्रकाश वर्मा बनाम आंध्र प्रदेश राज्य [2010] 15 एस. सी. आर. 302:(2010) 13 एस. सी. सी. 158; ग्रीन व्यू टी एंड इंडस्ट्रीज बनाम कलेक्टर (2002) 1 एस. सी. सी. 109; इंडियन काउंसिल फॉर एनविरो-लीगल एक्शन बनाम भारत संघ (2011) 8 एस. सी. सी. 161-संदर्भित।

पी. डी. नंदा बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य, 2013 एस. सी. सी. ऑनलाइन एच. पी. 5151-संदर्भित।

अधिनियमों की सूची

भारत का संविधान; हिमाचल प्रदेश कॉर्पोरेट क्षेत्र के कर्मचारी (पेंशन, पारिवारिक पेंशन, पेंशन और ग्रेच्युटी का कम्यूटेशन) योजना, 1999; केंद्रीय सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1972; केंद्रीय सिविल सेवा (पेंशन का कम्यूटेशन) नियम, 1981।

मुख्य शब्दों की सूची

रिट याचिका; भारत के संविधान का अनुच्छेद 32; अनुच्छेद 32 के तहत न्यायिक समीक्षा के लिए उच्चतम न्यायालय का निर्णय उत्तरदायी नहीं है; उच्चतम न्यायालय के फैसले को प्रत्यक्ष या संपार्श्विक चुनौती; राजेश चंदर सूद मामला; प्रासंगिक कानून के अनुसार नहीं; बाध्यकारी उदाहरण; मुकदमे की अंतिमता; एक निर्णय प्रक्रिया की अंतिमता का सिद्धांत; समीक्षा याचिका; उपचारात्मक याचिका; हिमाचल प्रदेश राज्य वन विकास निगम लिमिटेड; हिमाचल प्रदेश कॉर्पोरेट क्षेत्र के कर्मचारी (पेंशन, परिवार पेंशन, पेंशन और ग्रेच्युटी का कम्प्यूटेशन) योजना, 1999; पेंशन लाभ से इनकार; न्यायिक प्रशासन। उच्चतम न्यायालय के आदेश की अंतिमता।

मामला सामने आ रहा है

नागरिक मूल न्यायनिर्णय: 2018 रिट याचिका (सिविल) संख्या 179

(भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत)

पार्टियों के लिए उपस्थिति

याचिकाकर्ताओं के लिए अधिवक्ता:

गोपाल शंकरनारायण, वरिष्ठ अधिवक्ता, आनंद वर्मा, सुश्री आद्याशा नंदा, सुश्री अदिति गुप्ता।

उत्तरदाताओं के लिए अधिवक्ता:

देवदत्त कामत, वरिष्ठ अधिवक्ता, अनुभव शर्मा, गौरव प्रकाश पाठक, निशांत कुमार, राजेश इनामदार, अजय देसाई, रेवंत सोलंकी, अभ्युदय बाजपेयी, गोपाल प्रसाद, सुश्री शल्य अग्रवाल।

उच्चतम न्यायालय का निर्णय/आदेश

निर्णय

उज्ज्वल भुयान, जे.

पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना गया।

- यह याचिका तीन याचिकाकर्ताओं द्वारा भारतीय संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत दायर की गई है। याचिकाकर्ता हिमाचल प्रदेश राज्य वन विकास निगम लिमिटेड (जिसे संक्षेप में 'निगम' कहा जाएगा) के सेवानिवृत्त अधिकारी हैं। वे हिमाचल प्रदेश कॉर्पोरेट सेक्टर कर्मचारी (पेंशन, पारिवारिक पेंशन, पेंशन एवं ग्रेच्युटी का संराशीकरण) योजना, 1999 के तहत पेंशन लाभ से वंचित किए जाने से व्यथित हैं, जिसे दिनांक 02.12.2004 की अधिसूचना के तहत बंद कर दिया गया था, हालांकि इसमें उन लोगों के लिए अपवाद रखा गया था, जिन्होंने इस योजना का विकल्प चुना था और

02.12.2004 से पहले सेवानिवृत्त हो गए थे। इसलिए, वे प्रतिवादियों को निर्देश देने की मांग करते हैं कि वे उक्त योजना के अनुसार अपनी सेवानिवृत्ति पर पेंशन का भुगतान करें, जो कि 02.12.2004 से पहले सेवानिवृत्त हुए समान स्थिति वाले कर्मचारियों के समान हो, जिसमें उनकी पेंशन योग्य सेवा को कार्यभार ग्रहण करने की तिथि से लेकर सेवानिवृत्ति की तिथि तक गिना जाएगा।

3. यह मुद्दा पहले याचिकाकर्ताओं के एक समूह द्वारा हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय (इसके बाद 'उच्च न्यायालय') के समक्ष भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत रिट याचिकाएँ दायर करके उठाया गया था, जिसमें मुख्य मामला पी.डी. नंदा बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य,¹ सीडब्ल्यूपी संख्या 4425/2009 था। उच्च न्यायालय ने दिनांक 19.12.2013 के निर्णय और आदेश द्वारा रिट याचिकाओं को स्वीकार कर लिया था और राज्य को उक्त योजना के अनुसार निगम के सेवानिवृत्त कर्मचारियों को पेंशन प्रदान करने का निर्देश दिया था। इस निर्णय को इस न्यायालय की दो न्यायाधीशों की पीठ ने हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम राजेश चंद्र सूद² मामले में उलट दिया।
4. इसके बाद, इसी राहत की मांग करते हुए इस अदालत के समक्ष वर्तमान रिट याचिका दायर की गई। विभिन्न तर्क उठाए गए हैं जिनमें यह भी शामिल है कि राजेश चंद्र सूद (उपरोक्त) निर्णय ने इस न्यायालय के कई बाध्यकारी पूर्व निर्णय को नजरअंदाज किया है और इसलिए, यह एक अनुचित निर्णय है।
5. इस न्यायालय ने 20.03.2018 दिनांकित आदेश के माध्यम से नोटिस जारी किया। उक्त आदेश में, इस न्यायालय की दो-न्यायाधीशों की पीठ ने यह देखने के बाद कि चूंकि राजेश चंद्र सूद (उपरोक्त) में इस न्यायालय के फैसले की शुद्धता पर सवाल उठाया गया है, विद्वान मुख्य न्यायाधीश से मामले को तीन-न्यायाधीशों की पीठ के समक्ष आदेश का अनुरोध किया। इस प्रकार मामले को वर्तमान पीठ के समक्ष रखा गया है और तदनुसार सुनवाई की गई है।
6. यद्यपि प्रतिवादी-राज्य के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने वर्तमान रिट याचिका की स्थिरता के बारे में प्रारंभिक आपत्ति उठाई है, हमारा विचार है कि इस तरह की आपत्ति पर प्रतिवादी के रुख पर विचार करते समय विचार किया जा सकता है।
7. प्रारम्भ में, प्रासंगिक तथ्यों पर ध्यान देना उचित होगा।

1 2013 एससीसी ऑनलाइन एचपी 5151

2 (2016) 10 एससीसी 77

8. निगम को हिमाचल प्रदेश सरकार द्वारा जारी एक अधिसूचना दिनांक 26.03.1974 के अनुसार कंपनी अधिनियम, 1956 के तहत शामिल किया गया था। यह पूरी तरह से राज्य सरकार के स्वामित्व और नियंत्रण में है क्योंकि निगम की शेयर पूंजी का 100% हिमाचल प्रदेश राज्य के स्वामित्व में है।
9. याचिकाकर्ता संख्या 1 को 29.10.1975 पर निगम में क्लर्क (लिपिक) के रूप में नियुक्त किया गया था। 27.03.1981 को उन्हें कनिष्ठ सहायक के पद पर पदोन्नत किया गया था। उन्हें 07.11.1984 को वरिष्ठ सहायक (वरिष्ठ लेखाकार) के पद पर पदोन्नत किया गया था। उन्हें 03.04.1989 को कार्यालय प्रबंधक (कनिष्ठ) के पद पर और उसके बाद 17.11.2011 को कार्यालय प्रबंधक (वरिष्ठ) के पद पर पदोन्नत किया गया था। याचिकाकर्ता संख्या 1 31.01.2013 को सेवानिवृत्त हुए।
 - 9.1. याचिकाकर्ता संख्या 2 को 15.02.1988 को निगम में लिपिक के पद पर नियुक्त किया गया था। 15.02.1993 को उन्हें वरिष्ठ लिपिक के पद पर पदोन्नत किया गया और उसके बाद 01.01.1996 को कनिष्ठ सहायक के पद पर। 07.09.2009 को उन्हें वरिष्ठ सहायक के पद पर पदोन्नत किया गया, जिसके बाद उन्हें कार्यालय प्रबंधक (कनिष्ठ) के पद पर पदोन्नत किया गया, जहाँ से वे 30.09.2016 को सेवानिवृत्त हुए।
 - 9.2. याचिकाकर्ता संख्या 3 को 05.12.1981 को निगम में लिपिक के पद पर नियुक्त किया गया था। 24.05.1985 को उन्हें वरिष्ठ लिपिक के पद पर पदोन्नत किया गया और उसके बाद 25.04.1992 को कनिष्ठ सहायक के पद पर पदोन्नत किया गया। 24.12.1993 को उन्हें वरिष्ठ सहायक के पद पर पदोन्नत किया गया। 08.11.2013 को याचिकाकर्ता संख्या 3 को कार्यालय प्रबंधक (कनिष्ठ) के पद पर पदोन्नत किया गया, जिसके बाद वे 30.11.2014 को सेवानिवृत्त हुए।
10. यह कहा गया है कि राज्य सरकार द्वारा सरकारी कर्मचारियों के वेतनमान में संशोधन के बाद निगम ने भी वेतनमान में इस तरह के संशोधन की अनुमति दी।
11. चूँकि निगम जैसे सरकारी निगमों के कर्मचारियों को राज्य सरकार के कर्मचारियों के साथ सेवा की सभी शर्तों, जैसे वेतनमान, भत्ते आदि के लिए समानता प्राप्त थी, इसलिए राज्य सरकार ने एक अधिसूचना 29.10.1999 को जारी की जिसमें सरकारी निगमों

यानी निगम जैसे राज्य सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के कर्मचारियों को पेंशन लाभों के संबंध में भी समानता प्रदान की गई थी। इस योजना को हिमाचल प्रदेश निगमित क्षेत्र के कर्मचारी (पेंशन, पारिवारिक पेंशन, पेंशन और ग्रेच्युटी का कम्प्यूटेशन) योजना, 1999 कहा गया था (जिसे इसके बाद '1999 योजना' के रूप में संदर्भित किया गया है) और यह 01.04.1999 पर और उससे प्रभावी हुई। यह उल्लेख किया गया कि निगमित क्षेत्र के कर्मचारियों के सभी पेंशन लाभों का निर्धारण केंद्रीय सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1972 और केंद्रीय सिविल सेवा (पेंशन का परिवर्धन) नियम, 1981 में निर्धारित प्रावधानों के अनुसार किया जाना था, जैसा कि हिमाचल प्रदेश सरकार द्वारा राज्य सरकार के कर्मचारियों के लिए संशोधित और अपनाया गया था। 1999 की योजना में निगमित क्षेत्र के कर्मचारियों द्वारा विकल्प का प्रयोग करने पर विचार किया गया कि क्या उन्हें मौजूदा वैधानिक प्रावधानों के तहत शासित किया जाएगा या 1999 की योजना के तहत शासित किया जाएगा, जिसमें एक पेंशन निधि के निर्माण पर विचार किया गया था। योगदान की सम्पूर्ण निधि सम्बंधित सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रम मय ब्याज अंशदायी भविष्य निधि 31.03.1999 तक संचित निधि (पेंशन निधि) में हस्तांतरित किया जाएगा जो हिमाचल प्रदेश सरकार के वित्त विभाग द्वारा प्रशासित एवम रख रखाव किया जाएगा। यह स्पष्ट किया गया कि जिन मौजूदा कर्मचारियों ने 1999 की योजना का विकल्प चुना था, वो स्वतः ही अंशदायी भविष्य निधि के नियोक्ताओं के हिस्से पर अपना दावा खो देंगे जिसमे 31.03.1999 तक राज्य सरकार का ब्याज भी शामिल होगा। तथापि उनकी सदस्यता की राशि माय ब्याज सामान्य भविष्य निधि में हस्तांतरित किया जाएगा जिसका आबंटन और रख रखाव सम्बंधित सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रम करेगा।

12. यह कहा गया है कि निगम ने 1999 की योजना को लागू आदेश के लिए अपने उपनियमों में संशोधन किया था। तीनों याचिकाकर्ताओं ने 1999 की योजना के पक्ष में अपने विकल्प का प्रयोग किया था क्योंकि इस योजना में उच्च पेंशन लाभ प्रदान किए गए थे।
13. ऐसा प्रतीत होता है कि 1999 की योजना की वित्तीय स्थिरता के संबंध में आपत्ति व्यक्त की गई थी। उपरोक्त पृष्ठभूमि में, राज्य सरकार ने 1999 की योजना की वित्तीय व्यवहार्यता की समीक्षा करने के लिए 2003 में एक उच्च स्तरीय समिति (इसके बाद समिति) का गठन किया। एक विस्तृत विश्लेषण के बाद, समिति ने 28.10.2003 पर

एक रिपोर्ट प्रस्तुत की। समिति का विचार था कि 1999 की योजना निम्नलिखित कारणों से आत्मनिर्भरता के आधार पर व्यवहार्य नहीं थी:

- i) ब्याज दर व्यवस्था में अनिश्चितता;
- ii) निगमित क्षेत्र में भर्ती में कमी आने से सृजित किए जाने वाले कोष का आकार कम हो जाएगा और 10-12 वर्षों के बाद उपार्जित देनदारियों का भुगतान करना मुश्किल होगा।
- iii) पेंशन योजना में निगमित क्षेत्र के कर्मचारियों को पेंशन का भुगतान करने की परिकल्पना की गई है जैसा कि सरकारी कर्मचारियों को भुगतान किया जा रहा है। वर्तमान में सरकारी कर्मचारी अपने महँगाई भत्ते को जोड़ने के साथ मूल वेतन के 50 प्रतिशत की दर से पेंशन के हकदार हैं। यह रिटर्न कॉर्पोरेट क्षेत्र के कर्मचारियों के लिए प्रस्तावित पेंशन कोष से संभव नहीं प्रतीत होता है।

14. उपरोक्त रिपोर्ट पर विचार करने के बाद, हिमाचल प्रदेश सरकार के वित्त विभाग ने दिनांक 02.12.2004 को एक अधिसूचना जारी की जिसके तहत 1999 की योजना को तत्काल प्रभाव से निरस्त कर दिया गया। यह स्पष्ट किया गया कि निरसन के परिणामस्वरूप, 01.04.1999 से अधिसूचना की तिथि अर्थात् 02.12.2004 तक सेवा से सेवानिवृत्त हुए कर्मचारियों को छोड़कर, अन्य कर्मचारी उन प्रावधानों के अंतर्गत आते रहेंगे जो 31.03.1999 तक उन पर लागू थे। यह स्पष्ट करते हुए कि सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम पेंशन स्वीकृत/वितरण प्राधिकारी होंगे, सीपीएफ में नियोक्ताओं का हिस्सा, उस पर ब्याज सहित, संबंधित सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों को हस्तांतरित कर दिया गया, जिन्हें पेंशन निधि का गठन करना आवश्यक था। अब तक सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के वे कर्मचारी जो 01.04.1999 से अधिसूचना के प्रकाशन की तिथि अर्थात् 02.12.2004 तक की अवधि के दौरान सेवा से सेवानिवृत्त हुए थे, उनके संबंध में निरसन अधिसूचना में निम्नानुसार कहा गया है:

इस तरह के निरसन के बावजूद, हिमाचल प्रदेश कॉर्पोरेट क्षेत्र के कर्मचारी जो सेवा से सेवानिवृत्त हुए। 01.04.1999 इस अधिसूचना के प्रकाशन की तारीख तक इस तरह से निरस्त की गई योजना के प्रावधानों के तहत शासित होता रहेगा; बशर्ते कि ऐसे सेवानिवृत्त कर्मचारियों ने ऐसी योजना का विकल्प चुना हो और अन्यथा योजना के तहत पेंशन के लिए पात्र हो गए हों।

15. उच्च न्यायालय के समक्ष बड़ी संख्या में रिट याचिकाएं दायर की गईं, जिसमें अधिसूचना दिनांक 02.12.2004 को चुनौती दी गई और यह निर्देश देने की मांग की गई कि निगम के सेवानिवृत्त कर्मचारियों की पेंशन का भुगतान 1999 की योजना के अनुसार किया जाना चाहिए। उच्च न्यायालय ने 19.12.2013 दिनांकित निर्णय और आदेश के माध्यम से सभी रिट याचिकाओं की अनुमति दी। कट-ऑफ तिथि 02.12.2004 को अधिकारातीत घोषित किया गया था, लेकिन दिनांकित 02.12.2004 अधिसूचना को असंवैधानिक घोषित करने के बजाय, इसे रिट याचिकाकर्ताओं और समान रूप से स्थित कर्मचारियों को शामिल करके पढ़ा गया, जो 1999 की योजना के सदस्य बन गए थे और 02.12.2004 के बाद सेवानिवृत्त हो गए थे, साथ ही साथ वे कर्मचारी जो 1999 की योजना के अधिसूचित होने पर पहले से ही सेवा में थे और उस योजना के सदस्य बन गए थे और अब से 1999 की योजना के तहत पेंशन के लिए पात्र के रूप में सेवानिवृत्त होंगे।
16. उच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णय को राज्य ने राजेश चंदर सूद (उपरोक्त) मामले में इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी थी। इस न्यायालय की दो-न्यायाधीशों की पीठ ने अभिनिर्धारित किया कि यह अपनी प्रशासनिक शक्तियों का प्रयोग करने में राज्य सरकार के अधिकार के भीतर था, जिसका उपयोग उसने कुछ लोगों के लिए पेंशन प्राप्त करने के अधिकार को जारी रखने और दूसरों को इससे वंचित करने के लिए एक कट-ऑफ तिथि निर्धारित करने के लिए दिनांक 02.12.2004 की विवादित निरसन अधिसूचना जारी करके किया था। पीठ ने आगे कहा कि सरकार अपने पहले के प्रशासनिक निर्णय और नीति में परिवर्तन करने के लिए स्वतंत्र है, हालांकि यह सभी कानूनी और वैधानिक दायित्वों के अनुरूप होना चाहिए। पीठ ने यह माना कि यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें कर्मचारी भविष्य निधि योजना, 1995 के तहत कर्मचारियों को प्राप्त अधिकारों को, जिसके तहत कर्मचारियों को 1999 की योजना का विकल्प चुनने से पहले शामिल किया गया था, किसी भी तरह से उनके नुकसान के लिए बदल दिया गया हो। 02.12.2004 दिनांकित निरसन अधिसूचना में केवल इतना कहा गया है कि संबंधित कर्मचारी उन सभी अधिकारों के हकदार होंगे जो उन्हें कर्मचारी भविष्य निधि योजना, 1995 के तहत प्राप्त हुए थे, न कि 1999 की योजना के तहत। जहां तक राज्य सरकार की प्रमाणिकता का संबंध है, पीठ ने कहा कि राज्य सरकार ने एक कल्याणकारी उपाय के रूप में निगम जैसी स्वतंत्र कानूनी संस्थाओं के कर्मचारियों को ईमानदारी से कुछ

सेवानिवृत्ति के बाद के लाभ देने का प्रयास किया था, इस गलत धारणा पर कि गलत गणना से उत्पन्न होता है, कि इसे उपलब्ध संसाधनों से पूरा किया जा सकता है। यह उपाय राज्य सरकार द्वारा प्रत्यर्थी-कर्मचारियों के नियोक्ता के रूप में अपनी क्षमता में नहीं बल्कि एक कल्याणकारी उपाय के रूप में अपनाया गया था। जब यह स्पष्ट हो गया कि राज्य सरकार द्वारा विस्तारित कल्याणकारी उपाय को बरकरार नहीं रखा जा सका जैसा कि मूल रूप से समझा गया था, तो उसे वापस ले लिया गया। इस प्रकार, राज्य सरकार की कार्रवाई नेक थी। राज्य सरकार ने एक सचेत निर्णय लिया था और राज्य सरकार द्वारा कट-ऑफ तिथि के रूप में 02.12.2004 तय करके किया गया वर्गीकरण कानून में उचित और न्यायसंगत था; इसका उस उद्देश्य के साथ भी संबंध था जिसे प्राप्त करने की मांग की गई थी। इन परिस्थितियों में उच्च न्यायालय के फैसले में हस्तक्षेप किया गया था।

17. याचिकाकर्ताओं के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री गोपाल शंकरनारायण ने प्रस्तुत किया कि वर्तमान कार्यवाही पेंशन संबंधी अधिकारों और याचिकाकर्ताओं की पात्रता से संबंधित है। यह राजेश चंदर सूद (उपरोक्त) में दिए गए निर्णय की शुद्धता से भी संबंधित है। यह न्यायालय दिनांक 20.03.2018 के आदेश के माध्यम से नोटिस जारी करते हुए, प्रथमदृष्टया, याचिकाकर्ताओं के इस तर्क से सहमत था कि राजेश चंदर सूद (उपरोक्त) के फैसले पर तीन-न्यायाधीशों की पीठ द्वारा फिर से विचार करने की आवश्यकता है।

17.1. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि राजेश चंदर सूद (उपरोक्त) में निर्णय अच्छा कानून नहीं है और अनुचित है क्योंकि यह इस न्यायालय के समन्वय और बड़ी पीठों के बाध्यकारी पूर्व निर्णय पर विचार करने में विफल रहता है। इसके अलावा, उक्त निर्णय में, पीठ ने 1999 की योजना के तहत कर्मचारियों के निहित अधिकार को स्वीकार करते हुए खुद का खंडन किया, लेकिन उन्हें इससे प्राप्त होने वाले लाभों से इनकार कर दिया।

17.2. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने राजेश चंदर सूद (उपरोक्त) मामले में फैसले के परिच्छेद 69, 70, 71 और 72 का उल्लेख किया है और प्रस्तुत किया है कि पीठ ने एक निष्कर्ष दर्ज किया था कि 1999 की योजना के लिए अपने विकल्प का उपयोग करने और कर्मचारी भविष्य निधि योजना, 1995 के तहत अपने सभी अधिकारों को माफ करने के बाद, संबंधित कर्मचारी 1999 की योजना के दायरे में आएंगे। जैसे ही वे 1999 की योजना के दायरे में आए, उनमें एक आकस्मिक अधिकार निहित हो गया। वास्तव में, पीठ ने राज्य के इस तर्क को खारिज कर

दिया था कि 1999 की योजना के तहत कर्मचारियों के अधिकार केवल सेवानिवृत्ति की आयु प्राप्त करने पर निहित होंगे और कर्मचारियों द्वारा दिए गए इस तर्क को स्वीकार किया कि पेंशन योजना द्वारा शासित कोई भी कर्मचारी उक्त योजना में नामांकन के तुरंत बाद योग्यता सेवा प्राप्त करने पर उससे लाभ का हकदार होगा, विशेष रूप से जब उन्होंने कर्मचारी भविष्य निधि योजना, 1995 के तहत अपने अधिकारों को छोड़ने का स्पष्ट रूप से फैसला किया था।

- 17.3. 1999 की योजना के खंड 1 (2) को ध्यान में रखते हुए, याचिकाकर्ताओं के लिए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किया गया कि खंड 1 (2) की शर्तें साफ और स्पष्ट हैं। निगमन के माध्यम से, केंद्रीय सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1972 और केंद्रीय सिविल सेवा (पेंशन का कम्प्यूटेशन) नियम, 1981, 1999 की योजना का विकल्प चुनने पर कर्मचारियों पर लागू हुए।
- 17.4. राजेश चंदर सूद (उपरोक्त) में, पेंशनभोगियों के निहित अधिकार को स्वीकार करने के बाद, इस न्यायालय ने कट-ऑफ तिथि (अंतिम तिथि) के मुद्दे पर विचार किया। उन्होंने प्रस्तुत किया कि हालांकि इस न्यायालय ने बेहतर और उच्च पेंशन लाभों को बढ़ाने के लिए एक कट-ऑफ तिथि के निर्धारण को बरकरार रखा है, लेकिन ऐसा कोई पूर्व निर्णय नहीं है जिसके तहत एक सजातीय वर्ग के साथ-साथ पेंशन प्राप्त करने के अधिकार को बंद करने के लिए एक कट-ऑफ तिथि को बनाए रखा गया है। वह प्रस्तुत करता है कि आर. आर. वर्मा बनाम भारत संघ³ एवम बालको कर्मचारी संघ बनाम भारत संघ⁴ केस पूरी तरह से गलत थे क्योंकि उन दोनों निर्णयों को अलग-अलग संदर्भों में प्रस्तुत किया गया था।
- 17.5. उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि राजेश चंदर सूद (उपरोक्त) में 02.12.2004 अधिसूचना को पूर्वव्यापी रूप से वापस लेने के फैसले को बरकरार रखते हुए और जिसके तहत केवल उन लोगों के पेंशन संबंधी अधिकारों को बचाया गया था जो 01.04.1999 और 02.12.2004 के बीच सेवानिवृत्त हुए थे, जबकि उन सभी कर्मचारियों के ऐसे अधिकारों को बचाया गया था जो 01.04.1999 और 02.12.2004 के बीच सेवा में थे, जो स्पष्ट रूप से इस अदालत द्वारा बड़ी संख्या में दिए गए निर्णयों में निर्धारित सिद्धांतों के विपरीत थे। यदि 1999 की योजना को कथित उद्देश्य यानी राज्य पर वित्तीय बोझ के कारण निरस्त करना

3 (1980)3 एससीसी 402

4 (2002)2 एससीसी 333

पड़ा, तो 1999 की योजना के तहत पहले से ही शामिल सभी लोगों के अधिकारों को नहीं बचाकर इसे निरस्त करना भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होगा।

- 17.6. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि अधिसूचना दिनांक 02.12.2004 द्वारा अभिनिर्धारित कट-ऑफ तिथि यह प्रदान करती है कि 1999 की योजना के तहत लाभ उन लोगों के लिए उपलब्ध होंगे जो 01.04.1999 और 02.12.2004 (अधिसूचना की तारीख) के बीच सेवानिवृत्त हुए थे, जिससे प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य के साथ कोई उचित संबंध रखे बिना एक सजातीय वर्ग को विभाजित करना भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होगा। इस संबंध में, उन्होंने डी. एस. नकारा बनाम भारत संघ⁵ मामले में इस न्यायालय के संविधान पीठ के फैसले का उल्लेख किया है और उस पर भरोसा किया है। वे प्रस्तुत करते हैं कि इस न्यायालय के पूर्व निर्णयों, जिनमें सेवानिवृत्ति की तारीख के आधार पर इसी तरह की कट-ऑफ तिथियों को इस न्यायालय द्वारा रद्द कर दिया गया था, पर राजेश चंदर सूद (उपरोक्त) में विचार नहीं किया गया था।
- 17.7. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री गोपाल शंकरनारायण प्रस्तुत करते हैं कि पेंशन प्राप्त करने का अधिकार एक निहित अधिकार है और एक बार जब याचिकाकर्ताओं ने 1999 की योजना का विकल्प चुना था, तो उसे इस आधार पर एकतरफा रूप से वापस नहीं लिया जा सकता था कि राज्य के पास योजना का समर्थन करने के लिए वित्तीय साधन नहीं थे। पेंशन प्राप्त करने का अधिकार राज्य के वित्त पर निर्भर नहीं है। राज्य सरकार के लिए 1999 की योजना के लागू होने के बाद इसे 1999 की योजना के तहत बनाए गए स्व-वित्तपोषित पेंशन कोष के रूप में चिन्हित करके अपनी जिम्मेदारी से हाथ धोना अनुचित था। राजेश चंदर सूद (उपरोक्त) मामले में इस महत्वपूर्ण पहलू को नजरअंदाज कर दिया गया था।
- 17.8. उन्होंने आगे कहा कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 300ए के आधार पर कर्मचारियों के तर्क को भी पीठ ने बिना किसी स्वतंत्र विश्लेषण के खारिज कर दिया था। जब इस न्यायालय ने मान्यता दी थी कि 1999 की योजना ने कर्मचारियों पर एक निहित अधिकार बनाया था, तो पेंशन प्राप्त करने का ऐसा वैधानिक अधिकार केंद्रीय सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1972 के संदर्भ में होगा।

इसलिए इस तरह के वैधानिक अधिकार को भारत के संविधान के अनुच्छेद

300ए के तहत संपत्ति के अधिकार के रूप में माना जाना चाहिए।

- 17.9. इसलिए, वह प्रस्तुत करता है कि राजेश चंदर सूद (उपरोक्त) मामला एक अच्छा कानून नहीं है और अनुचित है। इस प्रकार, 1999 की योजना के अनुसार याचिकाकर्ताओं के पेंशन संबंधी अधिकारों की मांग करने वाली वर्तमान रिट याचिका को इस न्यायालय द्वारा अनुमति दी जा सकती है।
18. इसके विपरीत, हिमाचल प्रदेश राज्य का प्रतिनिधित्व करने वाले विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री देवदत्त कामत ने प्रस्तुत किया कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत दायर वर्तमान रिट याचिका पूरी तरह से गलत है क्योंकि रिट याचिका में उठाया गया मुद्दा यानी 1999 की योजना के तहत पेंशन के लिए याचिकाकर्ताओं की पात्रता निगम के समान स्थित कर्मचारियों के बराबर है जो 01.04.1999 और 02.12.2004 के बीच सेवानिवृत्त हुए थे, इस अदालत द्वारा राजेश चंदर सूद (उपरोक्त) मामले में पहले ही निर्णय लिया जा चुका है। केवल इसी आधार पर रिट याचिका खारिज की जा सकती है।
- 18.1. इसके बाद, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने वर्तमान मामले के तथ्यों को स्वीकार किया है और प्रस्तुत किया है कि वर्तमान कार्यवाही में उठाए गए सभी मुद्दों को राजेश चंदर सूद (उपरोक्त) में उठाया गया था और इस अदालत द्वारा निर्णय दिया गया था।
- 18.2. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि उच्च न्यायालय ने 19.12.2013 दिनांकित निर्णय और आदेश के माध्यम से रिट याचिकाओं के पहले के समूह को अनुमति दी थी। इसे राज्य द्वारा राजेश चंदर सूद (उपरोक्त) में इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी जिसका निर्णय 28.09.2016 पर लिया गया था। यद्यपि वर्तमान याचिकाकर्ता इससे पहले सेवानिवृत्त हो चुके थे, लेकिन वे उपरोक्त कार्यवाही में शामिल नहीं हुए। वास्तव में, उन्होंने उच्च न्यायालय के समक्ष कार्यवाही में भी भाग नहीं लिया। अपनी सेवानिवृत्ति के बहुत बाद, उन्होंने वर्तमान रिट याचिका दायर की। इस प्रकार, याचिकाकर्ताओं की ओर से इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाने में काफी देरी और अड़चनें हैं, जो उन्हें किसी भी राहत के लिए अयोग्य ठहराएंगी।
- 18.3. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता का जोरदार तर्क है कि वर्तमान रिट याचिका और कुछ नहीं बल्कि राजेश चंदर सूद (उपरोक्त) में इस अदालत के बाध्यकारी फैसले को

एक संपाश्विक चुनौती है। यह याचिकाकर्ताओं के लिए राजेश चंदर सूद (उपरोक्त) में आग्रह किए गए आधारों के उसी समूह को उठाने के लिए खुला नहीं है जिन्हें इस अदालत ने खारिज कर दिया था। उन्होंने कहा कि इस न्यायालय के फैसले की शुद्धता पर संदेह करने के लिए रिट याचिका दायर नहीं की जा सकती है।

- 18.4. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि प्रति प्रासंगिक कानून का सिद्धांत वर्तमान मामले के तथ्यों की ओर बिल्कुल भी आकर्षित नहीं है। प्रासंगिक कानून के अनुसार गठित करने के लिए कानून और पूर्ववर्ती की कोई स्पष्ट चूक नहीं है।
- 18.5. मामले के गुण-दोष पर, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि वित्तीय व्यवहार्यता या गैर-व्यवहार्यता एक वैध विचार था जिसे राज्य द्वारा निरसन अधिसूचना जारी करते समय ध्यान में रखा गया था। उच्च स्तरीय समिति ने इस मुद्दे की गहन जांच की थी और उसके बाद रिपोर्ट प्रस्तुत की थी। उच्च स्तरीय समिति की रिपोर्ट के आधार पर निरसन अधिसूचना जारी की गई थी।
- 18.6. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता प्रस्तुत करते हैं कि याचिकाकर्ता राज्य सरकार के कर्मचारी नहीं थे और इसलिए, वे राज्य सरकार के कर्मचारियों के बराबर सेवानिवृत्ति लाभ सहित सेवा लाभ नहीं ले सकते हैं। राज्य सरकार ने 1999 की योजना को निगम जैसे सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के कर्मचारियों के लिए एक कल्याणकारी उपाय के रूप में पेश किया था, न कि एक नियोक्ता के रूप में। लेकिन जब यह पाया गया कि 1999 की योजना के वित्तपोषण के लिए उपलब्ध संसाधन अपर्याप्त थे, तो उन्हें वापस ले लिया गया। हालाँकि, उन कर्मचारियों के हितों की रक्षा की गई जिन्होंने 1999 की योजना का विकल्प चुना था और निरसन अधिसूचना जारी होने से पहले सेवानिवृत्त हो गए थे क्योंकि उन्हें 1999 की योजना के तहत लाभों का हकदार माना गया था। इसका उद्देश्य उन कर्मचारियों को वंचित करना नहीं था जो 1999 की योजना के निर्वहन के दौरान सेवानिवृत्त हुए थे।
- 18.7. इसलिए, वह प्रस्तुत करते हैं कि 1999 की योजना के तहत लाभों के हकदार होने के लिए उन कर्मचारियों को अनुमति देने के लिए कट ऑफ तिथि (अंतिम तिथि) के रूप में निरसन अधिसूचना जारी करने की तारीख का निर्धारण मनमाना और भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन नहीं कहा जा सकता है।

- 18.8. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता का कहना है कि 1999 की योजना राज्य सरकार के एक नीतिगत निर्णय का परिणाम थी। इसे वापस लेना भी नीति निर्माण के दायरे में आता है। इस तरह की निकासी में कोई मनमानी नहीं है। प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत को ऐसी स्थिति में नहीं बढ़ाया जा सकता है। इन परिस्थितियों में, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री कामत प्रस्तुत करते हैं कि रिट याचिका में कोई योग्यता नहीं है, इसके अलावा यह विचारणीय नहीं है। इसलिए वह रिट याचिका को खारिज करने की मांग करता है।
19. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं के निवेदन पर न्यायालय द्वारा उचित विचार किया गया। दोनों पक्षों द्वारा बड़ी संख्या में न्यायिक निर्णयों का हवाला दिया गया है। उन पर विचार किया गया है। हालांकि, केवल उन्हीं निर्णयों का संदर्भ दिया जाएगा जो प्रासंगिक और आवश्यक पाए जाते हैं।
20. प्रारंभ हम इस बात की जांच करें कि उच्च न्यायालय ने इस मुद्दे से कैसे निपटा था। पी. डी. नंदा (उपर्युक्त) मामले में, उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि जिस क्षण कर्मचारी 1999 की योजना के सदस्य बने, उन्होंने एक निहित अधिकार प्राप्त कर लिया था और इसलिए उन्हें 1999 की योजना के दायरे से बाहर निकालने से पहले उनकी सुनवाई की आवश्यकता थी। उच्च न्यायालय ने कहा कि जब 1999 की योजना तैयार की गई थी और 29.10.1999 पर अधिसूचित की गई थी, जो 01.04.1999 से प्रभावी थी, तो राज्य सरकार सभी कानूनी निहितार्थों से अवगत थी, लेकिन राज्य सरकार के साथ-साथ सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों की ओर से 1999 की योजना के कार्यान्वयन के प्रति लापरवाही थी। सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों को कोष के निर्माण के लिए अपने निपटान में तुरंत धन हस्तांतरित करने की आवश्यकता थी। जब कर्मचारियों ने 1999 की योजना का विकल्प चुना था, तो वे स्वतः ही पिछली 1995 की योजना के सदस्य नहीं रह गए। इसलिए, 1999 की योजना को वापस लेना अनुचित था। यद्यपि उच्च न्यायालय ने 02.12.2004 की अधिसूचना को कानूनी रूप से गलत पाया, लेकिन उसने यह विचार व्यक्त किया कि 1999 की योजना के उद्देश्य को प्रभावी बनाने के लिए उक्त अधिसूचना को उन कर्मचारियों को शामिल करके पढ़ा जाना आवश्यक था जो योजना के सदस्य बने थे और 02.12.2004 से पहले सेवानिवृत्त हो गए थे, क्योंकि वे 1999 की योजना के तहत लाभ के हकदार थे, न कि उन्हें असंवैधानिक घोषित किया गया था। उच्च न्यायालय ने राज्य सरकार की इस दलील को भी खारिज कर दिया कि

वित्तीय संकट के कारण 1999 की योजना को लागू नहीं किया जा सका। रिट याचिकाओं को अनुमति देते हुए, उच्च न्यायालय ने घोषणा की कि 02.12.2004 की कट-ऑफ तिथि अधिकारातीत होगी। उन रिट याचिकाकर्ताओं और समान रूप से स्थित कर्मचारियों को पेंशन लाभ के उद्देश्य से शामिल करके दिनांकित 02.12.2004 की निरसन अधिसूचना को पढ़ा गया था। उच्च न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दिया:

80. तदनुसार, ऊपर किए गए विश्लेषण और चर्चा को देखते हुए, सभी रिट याचिकाएं स्वीकृत की जाती हैं। कट-ऑफ तिथि 02.12.2004 अधिकारातीत घोषित किया जाता है। इसे असंवैधानिकता, अतार्किकता, मनमानेपन या अनुचितता से बचाने के लिए अधिसूचनाओं और समान रूप से स्थित कर्मचारियों को भी शामिल करके, जो 29.10.1999 पर अधिसूचित योजना के सदस्य बन गए थे और 02.12.2004 के बाद सेवानिवृत्त हो गए हैं और वे कर्मचारी जो पहले से ही सेवा में थे जब पेंशन योजना को 29.10.1999 पर अधिसूचित किया गया था और उस योजना के सदस्य बन गए थे और अलगाव के सिद्धांत को लागू करने के बाद पेंशन लाभ के उद्देश्य से इसके बाद सेवानिवृत्त होंगे। क्षेत्रीय भविष्य निधि आयुक्त, शिमला को अंशदायी भविष्य निधि की पूरी राशि को दो सप्ताह की अवधि के भीतर हिमाचल प्रदेश सरकार द्वारा वित्त विभाग में प्रशासित और बनाए रखने के लिए एक कोष में स्थानांतरित करने का निर्देश दिया गया है, जिसमें अब तक का ब्याज भी शामिल है। इसके बाद, पेंशन मंजूरी प्राधिकरण को संबंधित सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों द्वारा भेजे गए मामलों की उचित जांच के बाद पेंशन/ग्रेच्युटी/पेंशन के परिवर्तन को मंजूरी देने का निर्देश दिया जाता है और आज से 12 सप्ताह की अवधि के भीतर पेंशन वितरण प्राधिकरण को पेंशन भुगतान आदेश जारी करने का निर्देश दिया जाता है। लंबित आवेदन यदि कोई हों, तो उनका भी निपटारा कर दिया जाता है। कोई लागत नहीं।
21. उच्च न्यायालय के इस निर्णय को राज्य सरकार ने राजेश चंदर सूद (उपरोक्त) मामले में इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी थी। इस न्यायालय ने सबसे पहले यह सवाल उठाया कि क्या निगमित निकायों के कर्मचारियों में एक निहित अधिकार बनाया गया जब वे 1999 की योजना द्वारा शासित हुए पर उचित विचार करने पर, इस न्यायालय ने यह विचार व्यक्त किया कि ऐसे कर्मचारी जिन्होंने 1999 की योजना द्वारा शासित होने के अपने विकल्प का उपयोग किया था, वे अपना विकल्प प्रस्तुत करने के तुरंत

बाद उक्त योजना द्वारा विनियमित किए गए। इसके अलावा, वे सभी कर्मचारी जिन्होंने किसी भी विकल्प का उपयोग नहीं किया, उन्हें स्वचालित रूप से 1999 की योजना का विकल्प चुना गया माना गया। जैसे ही संबंधित कर्मचारी 1999 की योजना द्वारा शासित हुए, एक आकस्मिक अधिकार उनमें निहित हो गया। इस सवाल पर कि क्या ऐसा आकस्मिक अधिकार बाध्यकारी और अपरिवर्तनीय है, इस न्यायालय ने कहा कि यह राज्य सरकार के लिए बाध्यकारी नहीं है। उक्त मुद्दे पर विचार करने से पहले, इस न्यायालय ने इस प्रश्न की जांच की कि क्या राज्य सरकार 1999 की योजना द्वारा शासित कुछ कर्मचारियों (जो 02.12.2004 से पहले सेवानिवृत्त हुए थे, वे 1999 की योजना के तहत पेंशन प्राप्त करने के हकदार थे, जबकि जो 02.12.2004 पर निरसन अधिसूचना जारी होने तक सेवानिवृत्त नहीं हुए थे, उन्हें इस तरह के लाभ से वंचित कर दिया गया था), इस प्रश्न का उत्तर इस न्यायालय द्वारा निम्नलिखित तरीके से दिया गया था:

75. इस मुद्दे द्वारा विचारपूर्वक विचार करने और उद्धृत निर्णयों को देखने के बाद, हमारा विचार है कि इस न्यायालय ने नियोक्ता की वित्तीय स्थिति के आधार द्वारा बेहतर और उच्च पेंशन लाभ देने के लिए बार-बार एक कट-ऑफ तिथि (अंतिम तिथि) को बरकरार रखा है। इसलिए, यदि उपलब्ध धनराशि सभी मौजूदा पेंशनभोगियों के दायित्व को पूरा नहीं कर सकती है, तो पेंशन लाभ बढ़ाने के लिए एक कट-ऑफ तिथि वैध रूप से निर्धारित की जा सकती है। इसलिए, हम इस निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए संतुष्ट हैं कि यह राज्य सरकार के अधिकार के भीतर है, अपनी प्रशासनिक शक्तियों का प्रयोग करते हुए (जिसका उपयोग उसने विवादित निरसन अधिसूचना दिनांक 02-12-2004 जारी करके किया था) एक कट-ऑफ तिथि निर्धारित करने के लिए, कुछ में पेंशन प्राप्त करने के अधिकार को जारी रखने के लिए, और कुछ अन्य लोगों को इससे वंचित करने के लिए। इस अधिकार का प्रयोग निर्विवाद रूप से राज्य सरकार द्वारा किया गया था, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा निर्धारित किया गया था, आर. आर. वर्मा मामले में [आर. आर. वर्मा बनाम भारत संघ, (1980)

3 एससीसी 402:1980 एस. सी. सी. (एल. एंड. एस.) 423], जिसमें इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि सरकार के पास समीक्षा करने की अंतर्निहित शक्ति निहित है और यह कि सरकार अपने पहले के प्रशासनिक निर्णयों और नीतियों को

बदलने के लिए स्वतंत्र थी। निश्चित रूप से राज्य सरकार ने वर्तमान विवाद में यही किया है। लेकिन इस न्यायालय ने उपरोक्त निर्णय में सरकार द्वारा इस तरह की शक्ति के प्रयोग पर रोक लगा दी। उस में, ऐसी शक्ति का प्रयोग सभी कानूनी और वैधानिक दायित्वों के अनुरूप होना चाहिए।

21.1. कर्मचारियों की ओर से एक तर्क उठाया गया था कि विबंधन/वचनबध्यता के सिद्धांत को लागू करके, राज्य को दिनांक 02.12.2004 की निरसन अधिसूचना जारी करके 1999 की योजना से पीछे नहीं हटना चाहिए था। इस न्यायालय ने उपरोक्त विवाद को निम्नानुसार खारिज कर दिया:

79. हमारा विचार है कि इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में प्रतिवादी कर्मचारियों के हाथों अवरोध/वचन निरसन के सिद्धांत को लागू नहीं किया जा सकता है। ऐसा नहीं है कि कर्मचारी भविष्य निधि योजना, 1995 (जिसके तहत प्रतिवादी कर्मचारियों को 1999 की योजना द्वारा शासित होने से पहले शासित किया गया था) के तहत प्रतिवादी कर्मचारियों को प्राप्त अधिकारों को किसी भी तरह से उनके नुकसान के लिए बदल दिया गया है। जो कुछ भी लिया गया था, और प्रतिवादी कर्मचारियों द्वारा नियोक्ता के योगदान को 31-3-1999 (उस पर उपार्जित ब्याज सहित) तक पूर्वनिर्धारित करने के माध्यम से छोड़ दिया गया था, उसे कोष में हस्तांतरण के माध्यम से प्रतिवादी कर्मचारियों को बहाल कर दिया गया था। सभी प्रतिवादी कर्मचारी, जिन्हें दिनांकित निरसन अधिसूचना द्वारा अपने पेंशन संबंधी दावों से वंचित कर दिया गया है, वे कर्मचारी भविष्य निधि योजना, 1995 के तहत उन सभी अधिकारों के हकदार होंगे जो उन्हें प्राप्त हुए थे। इसलिए, हमारे लिए यह प्रतिग्रहण करना संभव नहीं है कि प्रतिवादी कर्मचारियों को उनके नुकसान के लिए उनकी स्थिति को अपरिवर्तनीय रूप से बदलने के लिए कहा जा सकता है। इसके अलावा, सभी निगमित निकाय (जिनके साथ प्रतिवादी कर्मचारी लगे हुए हैं) स्वतंत्र न्यायिक निकाय हैं, जैसा कि असम राज्य बनाम बराक उपनायक डी. यू. कर्मचारी संस्था [असम राज्य बनाम बराक उपनायक डी. यू. कर्मचारी संस्था, (2009) 5 एस. सी. सी. 694:(2009) 2 एस. सी. सी. (एल. एंड एस.) 109]। केवल यह तथ्य कि संदर्भ के तहत निगमित निकाय, पूरी तरह से द्वारा नियंत्रित हैं।

राज्य सरकार और राज्य सरकार अपने संस्था के अंतर्नियम के तहत उनकी सेवा की शर्तों को निर्धारित करने का अंतिम अधिकार है, जो अप्रासंगिक है। निस्संदेह, प्रतिवादी कर्मचारी सरकारी कर्मचारी नहीं हैं। राज्य सरकार ने एक कल्याणकारी उपाय के रूप में, ऐसी स्वतंत्र कानूनी संस्थाओं के कर्मचारियों को ईमानदारी से कुछ सेवानिवृत्ति के बाद के लाभ देने का प्रयास किया था, इस गलत धारणा पर कि एक गलत गणना से उत्पन्न होता है, कि इसे उपलब्ध संसाधनों से पूरा किया जा सकता है। यह उपाय राज्य सरकार द्वारा प्रतिवादी कर्मचारियों के नियोक्ता के रूप में अपनी क्षमता में नहीं, बल्कि एक कल्याणकारी उपाय के रूप में अपनाया गया था। जब यह स्पष्ट हो गया कि राज्य सरकार द्वारा बढ़ाया गया कल्याणकारी उपाय, जैसा कि मूल रूप से समझा गया था, बनाए नहीं रखा जा सका, तो उसे वापस लेने की मांग की गई।

21.2. इसलिए, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि वर्तमान विवाद के तथ्यों पर विबंधन/वचनबध्यता के सिद्धांत को लागू करना कानूनी रूप से संभव नहीं था।

21.3. 1999 की योजना की वित्तीय व्यवहार्यता के संबंध में, यह न्यायालय ने इस प्रकार निर्णय दिया:

84. अगले विवाद की ओर बढ़ते हैं। 1999 की योजना की वित्तीय व्यवहार्यता के संबंध में हमारे सामने एक गंभीर विवाद उठाया गया है। जहाँ तक अपीलकर्ता राज्य का संबंध है, उसकी ओर से यह दावा किया गया कि राज्य सरकार के वित्त विभाग द्वारा 21-1-2003 पर एक उच्च स्तरीय समिति का गठन किया गया था। उक्त समिति में सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों और संबंधित निगमों के प्रबंध निदेशक शामिल थे। उच्च स्तरीय समिति का कार्य 1999 की योजना की वित्तीय व्यवहार्यता की जांच करना था। उक्त समिति ने 28-10-2003 दिनांकित एक रिपोर्ट प्रस्तुत की, जिसमें यह निष्कर्ष दिया गया कि 1999 की योजना वित्तीय रूप से व्यवहार्य नहीं थी, और आत्मनिर्भर नहीं होगी। इसलिए, राज्य सरकार द्वारा 1999 की योजना को वापस लेने का एक अस्थायी निर्णय लिया गया था।

85. 1999 की योजना को वापस लेने के तौर-तरीकों को निर्धारित करने के लिए, उपरोक्त रिपोर्ट के आधार पर, वित्त विभाग और राज्य सरकार के विधि विभाग द्वारा संयुक्त रूप से मामले की जांच की गई, जिसमें विधि विभाग द्वारा दी गई सलाह के अनुरूप यह निर्णय लिया गया कि 1999 की योजना को पूर्वव्यापी रूप से वापस नहीं लिया जाना चाहिए। विधि विभाग की सलाह के आधार पर अंततः

यह निर्णय लिया गया कि जिन लोगों ने 1999 की योजना के तहत पेंशन लाभ लेना शुरू किया था, वे इससे वंचित नहीं रहेंगे। और यह कि, 1999 की योजना को संभावित रूप से वापस लिया जाना चाहिए, उन लोगों के लिए जिनका पेंशन लाभ प्राप्त करने का अधिकार उत्पन्न नहीं हुआ था, क्योंकि वे अभी तक सेवा से सेवानिवृत्त नहीं हुए थे। मामले के उपरोक्त दृष्टिकोण में, राज्य सरकार की ओर से यह तर्क दिया गया था कि राज्य सरकार की दिनांकित निरसन अधिसूचना जारी करने की कार्रवाई निश्चित रूप से प्रशासनिक समीक्षा की शक्ति का मनमाना प्रयोग नहीं थी। यह प्रस्तुत किया गया था कि यह दो कारकों पर आधारित था। पहला, योजना की वित्तीय अव्यवहार्यता और दूसरा, जिन लोगों ने पहले ही 1999 की योजना के तहत पेंशन लाभ प्राप्त करना शुरू कर दिया था, वे प्रभावित नहीं होने वाले थे। इसलिए यह बताया गया कि राज्य सरकार द्वारा किया गया वर्गीकरण उचित और कानूनी रूप से न्यायोचित था, और इसका उस उद्देश्य से भी संबंध था जिसे प्राप्त किया जाना था।

86. उपरोक्त परिदृश्य में 1999 की योजना की वैधता और न्यायसंगतता की जांच करनी होगी। प्रतिवादी कर्मचारियों के कहने पर प्रस्तुत किया गया कि राज्य सरकार के लिए ऐसी कोई दलील पेश करना स्वीकार्य नहीं है, क्योंकि यह माना जाना चाहिए कि राज्य सरकार ने 1999 की योजना को प्रभावी करने से पहले योजना की वित्तीय व्यवहार्यता की जांच कर ली थी और यह कि, 1999 की योजना को प्रभावी करने के बाद, राज्य सरकार के मुंह से यह कहना उचित नहीं है कि 1999 की योजना वित्तीय रूप से व्यवहार्य नहीं थी। इस बात पर ज़ोर दिया गया कि भले ही योजना की वित्तीय व्यवहार्यता से संबंधित आंकड़े, जिन पर भरोसा करने की कोशिश की गई थी, सही हों, फिर भी वित्तीय कमियों को, यदि कोई हो, राज्य सरकार द्वारा, अपने पास उपलब्ध विशाल वित्तीय संसाधनों से पूरा किया जा सकता है। और इसके अलावा, उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के अनुसार 1999 की योजना को, भले ही निरस्त करने की अनुमति दे दी जाए, इससे प्रतिवादी कर्मचारियों के पेंशन संबंधी लाभों के अधिकार पर कोई प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए।

87. हमने उपरोक्त विवाद पर विचारपूर्वक विचार किया है। प्रतिवादी कर्मचारियों की ओर से दिए गए तत्काल विवाद को प्रतिग्रहण करना हमारे लिए संभव नहीं है। योजना की वित्तीय व्यवहार्यता को प्रदर्शित करने के लिए राज्य

सरकार के कहने पर अनुमानित गणना विवादित नहीं है। उपरोक्त पैरा 10 और 11 में इनका विवरण दिया गया है। उच्च-स्तरीय समिति द्वारा प्रस्तावित इसका आधार, स्वीकार्य रूप से दिनांक 02-12-2004 की निरसन अधिसूचना जारी करने के लिए तर्क का गठन करता है। हमारा विचार है कि राज्य सरकार द्वारा विचार सचेत और स्पष्ट था, और तथ्यों और आंकड़ों द्वारा समर्थित था। यह स्पष्ट है कि जिन 17 निगमों/बोर्डों को इस मुद्दे पर अपने विचार व्यक्त करने के लिए आमंत्रित किया गया था, उनमें से केवल 7 ने वास्तव में ऐसा किया था। यह प्रतिवादी कर्मचारियों का मामला नहीं है कि जिन लोगों ने अपने विचार व्यक्त किए थे, उनमें से किसी ने इस तथ्य का विरोध किया कि पेंशन योजना स्व-वित्तपोषित नहीं थी। जिन लोगों ने अपने विचार व्यक्त किए, उन्होंने पुष्टि की कि पेंशन योजना को केवल सरकारी सहायता से ही बचाया जा सकता है। जिन लोगों ने अपने विचार व्यक्त नहीं किए, जाहिर है कि उनके पास देने के लिए कोई टिप्पणी नहीं थी। इसलिए, राज्य सरकार द्वारा प्रस्तावित स्थिति का प्रभावी ढंग से खंडन नहीं किया जा सकता है। प्रतिवादी कर्मचारियों की ओर से कुछ तथ्यों और आंकड़ों को वास्तव में पेश किया गया है। इन्हें हमने पैराग्राफ 60 और 61 में दर्ज किया है। वित्तीय गणनाएं सामान्य आधार पर, आकस्मिक रूप से नहीं की जा सकतीं। किसी भी प्रामाणिकता की अनुपस्थिति में, और वह भी 1999 की योजना की अनुसूची 1 में निर्दिष्ट सभी 20 निगमित संस्थाओं के संदर्भ में, प्रतिवादी कर्मचारियों की ओर से किए गए अनुमानों को एक अनुकूल कानूनी निर्धारण के लिए एक वैध आधार के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता है। चूंकि प्रतिवादी कर्मचारी यह प्रदर्शित करने में समर्थ नहीं हैं कि 1999 की योजना को वापस लेने का मूलभूत आधार, किसी भी मनमाने विचार पर आधारित नहीं था, या वैकल्पिक रूप से, किसी भी अप्रासंगिक विचार पर आधारित नहीं था, इसलिए हमारे लिए इस तर्क को प्रतिग्रहण करना संभव नहीं है कि 1999 की योजना को वापस लेना, उचित विचार पर आधारित नहीं था, या यह कि, यह तर्कहीन या मनमाना या अनुचित था। हम इस बात से भी संतुष्ट हैं कि राज्य सरकार की उन लोगों को अनुमति देने की कार्रवाई, जिन्होंने पहले ही 1999 की योजना के तहत पेंशन लाभ अर्जित करना शुरू कर दिया था, एक वैध वर्गीकरण पर आधारित थी, जो कानून में स्वीकार्य थी। मामले के उपरोक्त दृष्टिकोण में, राज्य सरकार की कार्रवाई को मनमाना और भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करने वाला नहीं

कहा जा सकता है। हम इस निष्कर्ष पर पहुंचने में भी संतुष्ट हैं कि कोष निधि (1999 की योजना को संचालित करने के लिए) की व्यवहार्यता के संदर्भ में गलत गणना पर आधारित होने पर राज्य सरकार की समझ (जिसके परिणामस्वरूप 1999 की योजना शुरू की गई थी) की प्रशासनिक रूप से समीक्षा की जानी थी। और यह कि समीक्षा की अपनी शक्ति का प्रयोग करने में राज्य सरकार का दृढ़ संकल्प अच्छी तरह से स्थापित था।

21.4. ऐसा अभिनिर्धारित करने के बाद, इस न्यायालय ने राज्य की ओर से इस तर्क को स्वीकार कर लिया कि बजटीय आवंटन नीतिगत निर्णय का विषय है और उच्च न्यायालय को 1999 की योजना को चलाने के लिए निगम के वित्तीय दायित्व को राज्य सरकार को हस्तांतरित नहीं करना चाहिए था। इस न्यायालय ने निम्नलिखित निर्णय दिया:

88. हमारे लिए यह प्रतिग्रहण करना भी संभव नहीं है कि किसी भी अदालत के पास राज्य सरकार पर मौद्रिक दायित्व तय करने का अधिकार क्षेत्र है, जैसा कि स्वाभाविक है। उच्च न्यायालय द्वारा पारित विवादित आदेश का परिणाम, जब तक कि यह उस अधिकार और देनदारियों से नहीं निकलता जो स्वयं न्यायालय में दर्ज किए गए बजटीय आवंटन नीतिगत निर्णयों का विषय है। राज्य सरकार ने 1999 की योजना को बढ़ावा देते हुए महसूस किया कि वही स्व-वित्तपोषण होगा। राज्य सरकार ने कभी भी पेंशन योजना को चलाने के लिए राज्य निधि से वित्तीय संसाधन आवंटित करने का इरादा नहीं रखा। इस मामले को देखते हुए राज्य सरकार पर उस दायित्व का बोझ नहीं डाला जा सकता था, जिस पर उसने कभी विचार नहीं किया था। इसके अलावा, यह स्वयं प्रतिवादी कर्मचारियों का मामला है कि हिमाचल प्रदेश राज्य में सिविल सेवकों के लिए शुरू की गई इसी तरह की पेंशन योजना को भी वापस ले लिया गया है। राज्य सरकार ने आवश्यक वित्तीय संसाधन प्रदान करने में अपनी असमर्थता का प्रदर्शन किया है। इसलिए हमारा विचार है कि उच्च न्यायालय को 1999 की योजना को चलाने के लिए वित्तीय दायित्व को राज्य सरकार को हस्तांतरित नहीं करना चाहिए था (जैसा कि वह नहीं कर सकता था)। संबंधित निगमित निकायों द्वारा दिए गए इसी तरह के सुझाव, सरकार पर अवशिष्ट देयता को बढ़ाने का आधार नहीं हो सकते हैं।

21.5. इस न्यायालय ने कर्मचारियों की इस दलील को खारिज कर दिया कि उनके साथ सरकारी कर्मचारियों की तरह ही व्यवहार किया जाना चाहिए। सरकारी कर्मचारियों के

साथ समानता के दावे को पूरी तरह से गलत माना गया। इसके बाद, इस न्यायालय ने निर्णय दिया कि राज्य सरकार के पास 1999 की योजना को निरस्त करने की क्षमता है। ऐसा करने से, राज्य सरकार ने कर्मचारियों के पेंशन प्राप्त करने के अधिकार में कटौती नहीं की थी; उन्हें पूर्ववर्ती पेंशन योजना के तहत पेंशन मिलती रहेगी, लेकिन 1999 की योजना के तहत अतिरिक्त लाभ नहीं मिलेंगे।

22. हालाँकि याचिकाकर्ताओं के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने तर्क दिया था कि राजेश चंद्र सूद (उपरोक्त) मामले में निर्णय अनुचित है, लेकिन हम ऐसा करने में असमर्थ हैं। इस न्यायालय ने राज्य की सिविल अपील को अनुमति देते हुए विस्तृत कारण दिए थे, जिससे उच्च न्यायालय के फैसले को उलट दिया गया था, जिसमें 02.12.2004 की कट-ऑफ तिथि (अंतिम तिथि) को बरकरार रखना भी शामिल था। केवल इसलिए कि याचिकाकर्ताओं के अनुसार दिए गए कारण राज्य के रुख को स्वीकार करते हुए निर्णय पिछले निर्णयों के साथ तालमेल में नहीं हो सकता है, इसे प्रति अनुमान दिया गया निर्णय नहीं कहा जा सकता है पर प्रासंगिक कानून की अवधारणा यहाँ एक विस्तृत विश्लेषण की गारंटी देने के लिए बहुत अच्छी तरह से तय की गई है। राजेश चंद्र सूद (उपरोक्त) में दिए गए फैसले को किसी भी बाध्यकारी मिसाल की अनदेखी नहीं कहा जा सकता है। इसलिए, इसे प्रासंगिक कानून के अनुसार दिया गया निर्णय नहीं कहा जा सकता है।
23. उपरोक्त से, यह स्पष्ट है कि अब जो तर्क उठाए जा रहे हैं, वे सभी राजेश चंद्र सूद (उपरोक्त) मामले में इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किए गए थे और उन सभी पर निर्णय लिया गया था। याचिकाकर्ताओं के लिए यह खुला नहीं है कि वे एक बार फिर वही राहत मांगें जो मुकदमे के पहले दौर में मांगी गई थी जिसे इस अदालत ने अस्वीकार कर दिया था। उच्च न्यायालय ने कर्मचारियों (पिछले दौर के याचिकाकर्ताओं और वर्तमान याचिकाकर्ताओं की तरह समान रूप से स्थित कर्मचारियों) के दावे को स्वीकार कर लिया था। जब इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय के फैसले को रद्द कर दिया था, तो यह स्पष्ट है कि न केवल उन याचिकाकर्ताओं बल्कि समान रूप से स्थित कर्मचारियों (वर्तमान याचिकाकर्ताओं की तरह) के दावे को भी नकार दिया गया था। इसलिए, भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत किसी कार्यवाही में राजेश चंद्र सूद (उपरोक्त) में इस न्यायालय के फैसले को सीधे या संपार्श्विक रूप से कोई चुनौती नहीं दी जा सकती है।

24. नरेश श्रीधर मिराजकर बनाम महाराष्ट्र राज्य⁶ में इस सरशियोरेराई की नौ-न्यायाधीशों की पीठ ने इस प्रश्न पर विचार किया कि क्या उच्च न्यायालय सरशियोरेराई द्वारा पारित एक न्यायिक आदेश जिसमें गवाहों द्वारा दिए गए साक्ष्य के समाचार पत्रों में प्रकाशन पर प्रतिबंध लगाया गया है, मुकदमे की सुनवाई लंबित रहने तक भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 (2) के तहत प्रमाण पत्र के रिट द्वारा सुधार किया जा सकता है। इस न्यायालय द्वारा अन्य मुद्दों पर भी विचार किया गया था, लेकिन वे वर्तमान विमर्श के उद्देश्य के लिए प्रासंगिक नहीं हो सकते हैं। तथ्यों और कानून पर विचार-विमर्श उत्प्रेषण रिट के बाद, इस न्यायालय ने राय दी कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित इस तरह के आदेश की वैधता या औचित्य को अनुच्छेद 32 के तहत प्रमाणपत्र की रिट जारी उत्प्रेषण के लिए की गई रिट कार्यवाही में नहीं उठाया जा सकता है। इस न्यायालय ने घोषणा की कि याचिकाकर्ताओं के इस तर्क को प्रतिग्रहण करना असंभव है कि उच्च न्यायालयों द्वारा उनके समक्ष लंबित कार्यवाही में या उसके संबंध में पारित न्यायिक आदेश भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत इस न्यायालय द्वारा सुधार किए जाने के लिए उत्तरदायी हैं।
25. इस न्यायालय ने उपनिरीक्षक साधन कुमार गोस्वामी बनाम भारत संघ,⁷ में भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत दिए गए इस न्यायालय के फैसले को फिर से खोलने की मांग करने वाली भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत दायर एक रिट याचिका पर विचार किया। तथ्यों के विश्लेषण के बाद, इस न्यायालय ने घोषणा की कि केवल इसलिए कि याचिकाकर्ता पिछले निर्णय के पक्षकार नहीं थे, वे भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत रिट याचिका दायर नहीं कर सकते। वास्तव में, इस न्यायालय ने ऐसी रिट याचिकाएं दायर करने पर गंभीर आपत्ति जताई।
26. रूपा अशोक हुर्रा बनाम अशोक हुर्रा⁸ एक ऐसा मामला था जिसमें इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने इस सवाल पर विचार किया कि क्या उक्त निर्णय की समीक्षा के लिए याचिका खारिज होने के बाद इस न्यायालय के फैसले की वैधता पर सवाल उठाने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत एक रिट याचिका को बनाए रखा जा सकता है। उक्त प्रश्न पर विचार-विमर्श करते हुए, इस न्यायालय ने ए.आर. अंतुले बनाम आर.एस. नायक⁹ मामले में अपने पिछले निर्णय का उल्लेख किया, जिसमें इस

6 एआईआर 1967 एससी 1

7 (1997) 2 एससीसी 225

8 (2002) 4 एससीसी 388

9 (1988) 2 एससीसी 602

न्यायालय की सात न्यायाधीशों की पीठ ने माना था कि इस न्यायालय का आदेश भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत उत्प्रेषण रिट जारी करके सुधार योग्य नहीं है। रूपा अशोक हुर्ग (उपरोक्त) ने निश्चित रूप से कहा कि अपनी प्रक्रिया के दुरुपयोग को रोकने और न्याय की घोर विफलता को ठीक करने के लिए, यह न्यायालय अपनी अंतर्निहित शक्ति का प्रयोग करते हुए अपने निर्णयों पर पुनर्विचार कर सकता है। इसके लिए, इस न्यायालय ने उपचारात्मक याचिका दायर करके समीक्षा याचिका को खारिज करने के बाद एक उपचारात्मक अधिकार क्षेत्र प्रदान किया। वर्तमान कार्यवाहियों में, हमें उपचारात्मक अधिकार क्षेत्र की रूपरेखा में गहराई से जाने की आवश्यकता नहीं है।

27. इस न्यायालय ने ओमप्रकाश वर्मा बनाम आंध्र प्रदेश राज्य¹⁰ के मामले में इस सुविचारित सिद्धांत को दोहराया कि उच्चतम न्यायालय के फैसले को इस आधार पर प्रसंगत रूप से चुनौती नहीं दी जा सकती कि कुछ बिंदुओं पर विचार नहीं किया गया था।
28. पुनः, भारतीय पर्यावरण-कानूनी कार्यवाई परिषद बनाम भारत संघ¹¹ के मामले में, इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत दायर एक रिट याचिका जो गुण-दोष के आधार पर उच्चतम न्यायालय के निर्णय की शुद्धता पर जोर देती है या पुनर्विचार की मांग करती है, वह बनाए रखने योग्य नहीं है। खोडे डिस्टिलरीज लिमिटेड बनाम महापंजीयक, सर्वोच्च न्यायालय भारत¹² में इसके पहले के निर्णय का उल्लेख करते हुए इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत एक रिट याचिका के माध्यम से समीक्षा याचिका खारिज होने के बाद सर्वोच्च न्यायालय के अंतिम निर्णय पर पुनर्विचार को कायम नहीं रखा जा सकता है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत पारित इस न्यायालय का निर्णय और आदेश संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत न्यायिक समीक्षा के लिए उत्तरदायी नहीं है।
29. इस प्रकार, कानून अच्छी तरह से तय है कि इस न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय, चाहे वह विशेष अनुमति याचिका के चरण में हो या भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए अनुमति देने के बाद, अनुच्छेद 32 के तहत सीधे या संपार्श्विक रूप से हमला नहीं किया जा सकता है। पीड़ित वादकारी का उपाय

10 (2010) 13 एससीसी 158

11 (2011) 8 एससीसी 161

12. (1996) 3 एससीसी 114

समीक्षा के लिए दायर करना है। यदि शिकायत इसके बाद भी बनी रहती है, तो वह ऐसे अधिकार क्षेत्र की आवश्यकताओं के अनुपालन के अधीन उपचारात्मक अधिकार क्षेत्र का आह्वान कर सकता है। लेकिन निश्चित रूप से यह उनके लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत एक रिट याचिका दायर करने के लिए खुला नहीं है।

30. इसलिए, यह बिलकुल स्पष्ट है कि वर्तमान रिट याचिका पूरी तरह से गलत धारणा है और इसे खारिज किया जा सकता है। हालांकि, रिकॉर्ड के साथ अलग होने से पहले, हम एक निर्णय प्रक्रिया की अंतिमता के सिद्धांत पर जोर देना और दोहराना चाहेंगे। लम्बित मुकद्दमा की अंतिमता एक सुदृढ़ न्यायिक प्रणाली का एक मुख्य पहलू है। मुकद्दमा जो समाप्त हो गया था या अंतिम रूप में पहुंच गया था, उसे फिर से नहीं खोला जा सकता है। एक वादकारी जो एक विशेष अनुमति याचिका में या उससे उत्पन्न होने वाली सिविल अपील में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय से व्यथित है, समीक्षा अधिकार क्षेत्र का आह्वान करके और उसके बाद एक उपचारात्मक याचिका द्वारा से इसकी समीक्षा की मांग कर सकता है। लेकिन इस तरह के निर्णय पर भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत एक रिट कार्यवाही में अस्थिर (अस्त व्यस्त) नहीं किया जा सकता है। यदि इसकी अनुमति दी जाती है, तो कोई अंतिमता नहीं होगी और मुकदमेबाजी का कोई अंत नहीं होगा। न्यायिक प्रशासन में अराजकता होगी।
31. ग्रीन व्यू टी एंड इंडस्ट्रीज बनाम कलेक्टर,¹³ में इस न्यायालय ने यह विचार व्यक्त किया कि उच्चतम न्यायालय के आदेश की अंतिमता को हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए। इस न्यायालय द्वारा भारतीय पर्यावरण-कानूनी कार्यवाई परिषद बनाम भारत संघ¹⁴ में इस हितकारी सिद्धांत को दोहराया गया था।
32. इस प्रकार, ऊपर की गई चर्चाओं को ध्यान में रखते हुए, हमारा विचार है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत दायर वर्तमान रिट याचिका पूरी तरह से गलत (भ्रामक) है। राजेश चंदर सूद (उपरोक्त) मामले में इस अदालत का निर्णय स्पष्ट रूप से याचिकाकर्ताओं के लिए बाध्यकारी है। यह स्थिति होने के कारण, रिट याचिका में कोई योग्यता नहीं है जिसे तदनुसार खारिज किया जाता है।
33. इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि याचिकाकर्ता सेवानिवृत्त कर्मचारी और वरिष्ठ

13. (2002) 1 एस. सी. सी 109

14. (2011) 8 एससीसी 161

नागरिक हैं, हम कोई भी खर्चा लगाने से बचते हैं।
मामले का परिणाम: रिट याचिका खारिज की गई।

/ हेडनोट तैयार किए गए: दिव्या पांडे

अनुवादकर्ता
जे.एस. महन्तान
(सेवानिवृत्त जिला एवं सत्र न्यायाधीश)